सामाजिक बुराअियां

रजि० नं० बी ४४४८

हरिजनसेवक

दो आना

(स्थापक: महात्मा गांधी)

भाग १५ सम्पादक: किशोरलाल मशरूवाला सह-सम्पादक: मगनभाअी देसाअी अंक ४४

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २९ दिसम्बर, १९५१

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

ग्राम-अर्थरचना

[राजघाट, दिल्लीकी ता० २० नवंबर '५१ की सायं-प्रार्थनामें श्री विनोबा भावे द्वारा ग्राम-अर्थरचना पर किया हुआ प्रवचन, जिसमें पैसेसे मुक्ति, हरअेकके लिअे काम, आयोजनमें चरखे तथा ग्रामोद्योगका स्थान आदि अनेक विषय समझाये गये हैं।]

पैसेसे मुक्ति

विनोबाने कहा — कल जो विचार समझाना शुरू किया था, अुसीका विस्तार आज करना चाहता हूं। कल मैंने कहा था कि जिसको 'मनी-अेकॉनामी' यानी पैसे पर आधारित समाज-रचना कहते हैं, अुसका मैं खंडन करना चाहता हूं। और अुसके बदलेमें श्रम पर आधारित समाज-रचना कायम करना चाहता हूं। यह विचार आज मैंने तुलसीदासजीके भजनमें सुना: "मैं भरोसे अपने रामके और देव सब दामके।" तो ये जो दामके देव हैं, अुनकी प्रतिष्ठा हम नहीं चाहते। बल्कि अपने रामके भरोसे अपने देशकी रचना करना चाहते हैं। चाहते तो यह हैं कि सारे देशकी यानी सारे शहरोंकी रचना भी वैसी ही हो। लेकिन देहातोंको तो हम पैसेसे प्रथम छुड़ा देना चाहते हैं। और शहर अगर पूरी तरह न बदलें, लेकिन ग्रामोंके साथ सहकार करें, पूरी तरह अुनके अनुकूल बन जायं, तो भी बहुत है।

तो अिस तरह यह समाज-रचना बदलनेका काम हम शीघ्र करना चाहते हैं। अुसी दृष्टिसे पैसे पर आधारित समाज-रचना बदलना चाहते हैं और श्रमके आधार पर समाज-रचना करना चाहते हैं। जब हम अैसा कहते हैं, तब लोग समझते हैं कि हम पुरानी बारटर (वस्तु-विनिमय) की व्यवस्था लाना चाहते हैं। लेकिन मुझे बारटरकी व्यवस्था मक़सूद नहीं है। बारटरकी व्यवस्था अेक बहुत प्रथम अवस्थामें शुरू हुअी थी। अुसमें कअी अड़चनें हैं। मैं अुसे फिरसे लाना नहीं चाहता। बल्कि मैं तो पेपर करन्सी (कागजी सिक्का) ही पसन्द करता हूं। गांवके लिअे मैं अैसी करन्सी नहीं चाहता, जिस पर आजकी तरह पैसेके अंक छपे हों, बल्कि अैसी जिस पर श्रमके घंटोंके अंक लिखे हों। और वह करन्सी किसी सुलतान या बादशाहकी मर्जीसे नासिकके प्रेसमें नहीं छपी हुअी होगी। बल्कि जितने घंटे प्रत्यक्ष परिश्रम किया गया होगा, अुसकी नोंद करनेवाली करन्सी होगी, और अुस कागज पर जो नकद परिश्रम हुआ होगा, वह लिखा जायगा। जो अुधार परिश्रम होगा, वह नहीं लिखा जायगा। अिस तरहका चलन चलेगा। और बाकी गांवकी अुपयोगकी चीजें, जिनका कच्चा माल गांवमें ही अुपलब्ध है, गांवमें ही बनेंगी। यह हमारी योजना है।

विकेन्द्रीकरण

अिसमें ट्रान्सपोर्ट (यातायात) आदिका सवाल अपने आप हल हो जाता है। और विकेन्द्रित पद्धतिसे सारी व्यवस्था होगी, जैसे भगवानने अकल सबको बांट दी है। नहीं बांटी होती और दिल्लीकी किसी बैंकमें केन्द्रित कर रखी होती, तो बेचारे अुस भगवानको आप मोटर और हवाअी जहाजमें दौड़धूप करते हुअे देखते और वह पसीना-पसीना हो जाता। लेकिन आज तो वह निश्चिन्त होकर क्षीरसागरमें सो रहा है। यहां तक कि लोग कहते हैं, भगवान है ही नहीं। अुन्हें अैसी विकेन्द्रित व्यवस्था कायम की कि अुसके सिर परसे सत्ताका सारा बोझ अुतर गया।

ग्रामराज्य

वही अुदाहरण लेकर हम हर गांवको आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं, ग्रामराज्य कायम करना चाहते हैं, जिसमें से गर्वका प्रतीक निकाल दें, तो राम-राज्य बन जाता है। यही हमारी कल्पना है। लेकिन आजकल शहरवालोंकी सारी अकल, अुनका सारा पुरुषार्थ और पराक्रम परदेशी चीजोंके रोकनेमें नहीं खर्च हो रहा है, बल्कि खर्च हो रहा है देहातकी चीजोंको देहातके बाहर यंत्रोंसे बनानेमें, और अिस तरह देहातके अुद्योगोंको खतम करनेमें। होना तो यह चाहिये था कि देहातके कच्चे मालका पक्का माल देहातमें ही बने, जिससे परदेशी मालके आयातको रोक सकें। अिस तरह होता तो गांव और शहरका सहकार होता, दोनों मालामाल होते, दोनों तरक्की करते, दोनों आरामसे रहते। लेकिन अैसा नहीं हो रहा है। गांवकी सेवाके नामसे शहरोंमें कारखाने खोले जाते हैं, जिससे गांवका अेक-अेक अुद्योग खतम हो रहा है। दाल बनानेके कारखाने शहरमें खोलते हैं और हमारे मंत्री अपना कर्तव्य समझते हैं कि अुनका अुद्घाटन करने जायं। मैं तो यह सब देखकर हैरान होकर रह जाता हूं। मैं नहीं समझता कि मंत्रियों पर यह जिम्मेदारी किसने लाद दी है। अुन्हें लगता है कि अिससे माल सस्ता होगा। यह सारा सस्ते और महंगेका विचार ही पैसेकी कोखसे निकला है। अिसलिअे हमें अिसमें से मुक्त होना है। और मेरा मानना है कि हमारा देश तभी अुन्नत होगा।

गांधी पर अंधविश्वास नहीं

गांधीजी तीस सालसे हमें समझाते आये और गांधीजीके नजदीक जो लोग थे, अुन सबने गांधीजी पर पूरी श्रद्धा तो रखी, फिर भी अुनके विचारोंको बिना सोचे-विचारे पूरी तरह माना हो अैसा नहीं है। लेकिन विचार कर कबूल किया। मुझे अुनके आध्यात्मिक विचार तो फौरन जंच गये। परंतु आर्थिक विचारोंको पूरी तरह कसौटी पर कसे बिना मैं अेकदम कबूल न कर सका। और आखिर जब मुझे यह निश्चय हो गया कि अुनके बिना हिन्दुस्तानका अुद्धार नहीं हो सकता, तभी मैंने अुन्हें स्वीकारा।

जब मैं यहां प्लानिंग कमीशनके साथ बैठा था, तो चर्चामें मैंने कहा कि अितना तो करो कि जो कच्चा माल गांवोंमें होता है और अुसकी अुनको आवश्यकता है, अुसका पक्का माल गांवोंमें ही बने। क्यों अुन चीजोंको वहां नहीं होने देते हो? अुन्हें अुतना संरक्षण क्यों नहीं दिया जा सकता, जब कि हमारी अितनी श्रम-शक्ति वहां पड़ी है और यंत्र-शक्ति हमारे पास अुतनी नहीं है? तो आखिर वे लोग कबूल तो कर लेते हैं कि हां, ठीक है सबको

www.vinoba.in

काम देना चाहिये। लेकिन जहां खादीका सवाल आता है और जहां कपास होती है वहीं कपड़ा बने और वहीं वह अिस्तेमाल हो, अैसी बात आती है, तब वे हिचकिचाते हैं। मैं यह नहीं कहूंगा कि अिस जमानेके अर्थशास्त्रज्ञ पूंजीपतियोंके बसमें हैं और अुनके विचारसे बोलते हैं, परंतु यह तो कहूंगा कि वह विचार पूंजीवादी है। अिस मामलेमें कम्युनिस्ट और पूंजीवादी भाअी-भाअी हैं। सिर्फ वितरणमें अुनका विचार दूसरा है। लेकिन अुत्पादनमें अेक ही है। अिसलिअे अिस विचारमें वे पूंजीपतियोंके पृष्ठपोषक हैं और जाने न जाने अुन्हींकी दिशामें यह हो रहा है।

जब मैं बात कहता हूं कि नैशनल प्लानिंगका यह गृहीत-कृत्य यानी पोस्टुलेट है कि हरअेक मनुष्यको आज ही पूर्ण काम दे सकते हैं और आज ही देना चाहिये। जिन औजारोंसे दे सकते हैं दें। लेकिन 'अेफिशियन्सी' (कुशलता) के नामसे अगर चन्द लोगोंको काम दिया जाय और सबको नहीं, तो वह नैशनल प्लानिंग (राष्ट्रीय आयोजन) नहीं होगा, 'पार्शियल प्लानिंग' (आंशिक आयोजन) होगा। अगर सारे देशका जिम्मा अुठाना है और आज ही अुठाना है, तो अिस विचारको साध्यके तौर पर नहीं, बल्कि पोस्टुलेट (गृहीत-कृत्य) के तौर पर मानना होगा। और मैं मानता हूं कि अगर हम अपने जो छोटे-छोटे औजार हमारे पास हैं अुनकी सहायतासे काम लेना स्वीकार करें, तो आज ही सबको काम दे सकते हैं।

लेकिन अेक तरफ वे कहते हैं कि काम देना चाहिये, और दूसरी तरफ कहते हैं कि खादीकी क्या जरूरत है? मैं जहां जाता हूं और खादीकी बात करता हूं, वहां लोग पूछते हैं कि स्वराज आ गया, फिर खादीकी क्या जरूरत है? तो मैं पूछता हूं कि खादी पर गांधीजीकी सरकार आअी है, फिर वे क्यों नहीं खादीका कार्यक्रम अपनाते? क्या फिर स्वराज गंवाना है?

चरखेका स्थान

लेकिन लोग अिसे अेकदम हजम नहीं कर रहे हैं। मुझे अिसमें आश्चर्य नहीं लगता है, क्योंकि चरखा हमारी बगावतका झंडा है। जब मैं घंटों खेती करने लगा, तो अेक अखबारने मेरी प्रशंसा करते हुअे लिखा कि विनोबा खादीका काम छोड़कर खेतीकी अुपासना कर रहे हैं। मुबारकबाद है अुन्हें। तो मैंने अिसका जवाब देते हुअे लिखा कि मुझे यह प्रशंसा मान्य नहीं है। मैं दिनभर खेती करता हूं, यह ठीक है। यह बहुत महत्त्वका काम है। और आजकल मेरा मुख्य काम खेती ही है। परन्तु अब तो मैं प्रार्थनामें कातने लगा हूं। अुसे अधिक पवित्र स्थान दिया है। दिनभर नहीं कातता हूं, क्योंकि दिनभर मजदूरी करनी चाहिये। पर खेती तो हर हालतमें करनी ही है। चरखा तो, जैसा मैंने अभी कहा, बगावतकी निशानी है। वही चरखा हमारे झंडेमें मौजूद है, यद्यपि दिखाअी नहीं देता। अुसके चित्रके बारेमें पूछा गया, तो पंडित नेहरूने कहा कि वह पुराना चरखा ही है। चित्रकी सहूलियतकी दृष्टिसे अुसमें कुछ फरक किया गया है और प्राचीन अितिहास भी अुसमें सम्मिलित कर लिया गया है।

जब मैं पूछता हूं कि चरखेके बदले क्या काम दोगे, तो ये लोग कहते हैं कि रास्ते बनवायेंगे। सवाल यह है कि कामोंमें कुछ नित्य काम होते हैं, कुछ अनित्य होते हैं। आखिर रास्ते कब तक बनवायेंगे? अेक बरस, दो बरस, चार बरस। लेकिन फिर तो दुरुस्तीका ही काम रह जाता है। लेकिन कपड़ा तो नित्य आवश्यकताकी वस्तु है। जब तक मानव समाज जिन्दा है और जब तक वह नंगा रहना पसंद नहीं करता, तब तक कपड़ेकी आवश्यकता है। तो वह नित्यका काम है। वह नित्यका काम तो हम छीन लेंगे और बदलेमें मिलका कपड़ा देंगे। फिर भी मैं बहस नहीं करूंगा और न आग्रह ही। आज आप अितनी प्रतिज्ञा कीजिये कि आज ही हम सबको काम देनेके लिअे तैयार हैं — चाहे औजारोंसे दें। मैं मानता हूं कि जब अिस संबंधमें सोचने बैठ जायेंगे, तो चरखेके सिवा और कोअी चीज आपको नजर नहीं आयगी। गांधीजीकी यह दिव्य दृष्टि थी। ऋषिके समान अुन्हें दर्शन हुआ था। अिसलिअे अुन्होंने कहा कि मेरा जन्म-दिन मेरा नहीं, चरखेका जन्म-दिन है। अुनकी और बातें याद रहें या न रहें, परंतु चरखेका स्मरण नित्य रहनेवाला है। यह बात हमेशा याद रहनेवाली है। अिस मनुष्यने अैसी बात बताअी और समाज-रचनाका अितना अुच्चतम विचार बताया कि जिससे हमें दूसरेकी ओर ताकना न पड़े। यह नहीं कि बाहरसे कुछ खरीदेंगे ही नहीं। लेकिन रोजकी आवश्यकताओंकी चीजें हम खुद पैदा करेंगे। अुसका नतीजा यह होगा कि पैसा भी आजकी तरह अस्थिर नहीं रहेगा। अुसका अुपयोग सीमित रहेगा और आज जो आपत्ति है, वह नहीं रहेगी।

यह सारी दृष्टि अुसमें पड़ी है। और यह अैसा मजबूत विचार है कि जिसे कोअी हिला नहीं सकता।

तेलंगानामें मैंने गांव-गांवमें देखा और सोशलिस्टोंसे पूछा कि क्या चरखेके बजाय कोअी और चीज बता सकते हो? तो अुन्होंने कहा — नहीं बता सकते।

अुस रोज जयप्रकाशनारायण आये थे। सारा गांवोंका अर्थ-शास्त्र मैंने अुन्हें समझाया और कहा कि मैं अेफिशियन्सी (कुशलता) और क्षमताके विरुद्ध नहीं हूं। सबको काम देनेके खयालसे हम जो औजार मौजूद हैं, अुनसे काम लेते जायं और आवश्यक सुधार करते जायं। यद्यपि वे प्रगतिशील विचारवाले माने जाते हैं, फिर भी अुन्होंने यह विचार मान्य किया। हर कोअी अिस विचारको मान्य करेगा, बशर्ते कि अुसकी मति मोह-ग्रस्त न हो। स्वराजके बाद भी चरखेका स्थान आज कम नहीं बल्कि ज्यादा है। सिर्फ पहचाननेकी जरूरत है।

(ता० २२-११-'५१ के 'हिन्दुस्तान' के आधार पर)

'भगवान, हमें शिक्षा दो!'

कार्यकर्ता-घर, गांधीग्राम, दक्षिण भारतके श्री अेस० जगन्नाथन् लिखते हैं:

"पुलयार और पालियार नामक दो आदिवासी जातियां पालनी पर्वतश्रेणियोंमें बसी हुअी हैं। अुनकी आबादी क्रमशः ८००० और २००० के लगभग है। पालियार लोगोंकी संख्या दिनोंदिन घटती जा रही है और वे मुश्किलसे सामूहिक रूपमें पाये जाते हैं। 'पालनीमलाअी आदिवासीगल संगम' की स्थापना अिस वर्षके शुरूमें हुअी थी और सच्ची निष्ठा और लगनवाले कार्यकर्ता अिन आदिवासियोंके सुधार-कार्यमें लगे हुअे हैं। संगम पहाड़ियोंके थंडीगुड़ी गांवमें आदिवासी बालकोंके लिअे अेक छात्रालय चलाता है। अुसमें २१ लड़के हैं, जिनमें से अेक चौथे दर्जेमें और बाकी सब पहले दर्जेमें पढ़ते हैं।

"अेक रोज मैं सुबह ही सुबह रवाना हुआ और १५ मीलका सफर करके दोपहरमें थंडीगुड़ी पहुंचा। छात्रालयकी शामकी प्रार्थनामें मैं शरीक हुआ। मुझसे लड़कोंके सामने कुछ बोलनेकी आशा रखी जाती थी। मैं अुनसे क्या कहता? मैंने अुनसे पूछा: 'तुम किससे प्रार्थना करते हो?' तुरन्त जवाब मिला: 'भगवानसे।' तब मैंने अेक लड़केसे पूछा: 'तुमने भगवानसे क्या मांगा?' अुसका यह अुत्तर सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ: 'मैंने भगवानसे मांगा कि मुझे शिक्षा और ज्ञान दो।' मैंने अुनसे बातचीत की और सब लड़के अन्तमें यह समझ गये कि अुन्हें भगवानसे दो बातोंके लिअे और प्रार्थना करनी चाहिये: १. स्वस्थ जीवन और २. सबका सुख।

"अिस तरह अेक आदिवासी बालक भी भगवानसे शिक्षा देनेकी प्रार्थना करता है। लेकिन अुनके लिअे शिक्षाकी

www.vinoba.in

सुविधायें हैं कहां ? पहाड़ी प्रदेशोंमें स्कूलोंकी अत्यन्त कमी है। वे लोग अितने गरीब हैं कि स्कूलोंमें जाकर पढ़ नहीं सकते। अुन्हें सरकारको पढ़ाना और खिलाना होगा।

"पालनीमलाअी आदिवासीगल संगमने आदिवासी बच्चोंके लिअे अेक छात्रालय शुरू किया है और मद्रास सरकारसे बच्चोंके भोजन-खर्चकी सहायता मांगते हुअे वर्तमान सरकारी आज्ञाको — जो चौथे दर्जे या अुससे अूपरके दर्जोंमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंके लिअे ही भोजन-खर्चकी सहायता मंजूर करती है — नरम बनाकर आदिवासी बालकोंके लिअे पहले दर्जेसे ही यह सहायता देनेकी विशेष प्रार्थना की है, क्योंकि अिन बालकोंने हालमें ही पढ़ाअी शुरू की है। अिसका सरकारने यह जवाब दिया है :

> 'सरकार अिस बातके लिअे कोअी कारण नहीं देखती कि भोजन-खर्चकी सहायता देनेके बारेमें अुसने दर्जोंका जो प्रतिबन्ध लगाया है, अुसे पहाड़ी हिस्सोंमें चलनेवाले आदिवासी छात्रालयोंके लिअे ढीला कर दिया जाय।'

"क्या सरकार अुस आदिवासी बालकके भोले हृदयकी नम्र प्रार्थनाके महत्त्वको समझेगी ? 'भगवान, हमें शिक्षा दो' यह प्रान्तके अैसे सुदूर प्रदेशसे की गअी पुकार है, जहां सरकार और सभ्य लोग आसानीसे नहीं पहुंच सकते। क्या सरकार यह महसूस करेगी कि अिन आदिवासी बालकोंके लिअे विशेष सुविधायें देनेकी जरूरत है, और पालनीमलाअी आदिवासीगल संगमकी प्रार्थना मंजूर करेगी ?"

अगर मद्रास सरकार सोच-विचारकर योग्य मामलोंमें अपनी सामान्य आज्ञाको नरम बना सके, तो मैं सचमुच अुसका स्वागत करूंगा। लेकिन लोगोंको और कार्यकर्ताओंको भी सरकारकी सीमायें जाननी चाहियें। अुसका भी खजाना खतम हो गया है। अिसके अलावा, जो प्रजा खानगी जायदाद रखनेका विशेष अधिकार भोगती है, वह सरकारी खजानेमें से स्कूलों, अस्पतालों, वाचनालयों जैसी संस्थाओंका सारा खर्च चलानेकी सरकारसे आशा नहीं रख सकती। खानगी जायदादकी संस्थाके साथ दान देनेका फर्ज जरूरी तौर पर जुड़ा हुआ है। और जायदादके मालिकोंको यह बात समझकर स्कूलों, अस्पतालों वगैराके लिअे अुदारतासे जमीनों और पैसेका दान देना चाहिये। कार्यकर्ताओंको भी समझना चाहिये कि स्कूल जो कुछ पैदा करे, अुसीसे अपना चालू खर्च निकालनेकी अुन्हें आकांक्षा रखनी चाहिये।

बेशक, सरकार यदि गरीबों और अमीरोंके हितमें चलाअी जानेवाली संस्थाओंके बीच फर्क करे और गरीबोंकी अुचित मांगें पूरी करनेके बाद ही अमीरोंके लिअे संस्थायें चलाये, तो अुसका अैसा करना सर्वथा अुचित होगा। जनताके कर्तव्यपरायण प्रतिनिधियोंको अिस बात पर जोर देना चाहिये कि सरकार अिस भेदको समझे।

वर्धा, १२-११-'५१ कि० घ० मशरूवाला
(अंग्रेजीसे)

जमीन बांटनेके बारेमें बापूके विचार

बापू और मीराबहनके बीच जमीनका बंटवारा करनेके बारेमें जो बातचीत हुअी थी, अुसकी रिपोर्ट डॉ० सुशीला नय्यरने अपनी पुस्तक 'बापूकी कारावास-कहानी' में पृष्ठ ३०९ पर अिस प्रकार दी है :

> "शामको घूमते समय मीराबहन बापूसे पूछने लगीं कि स्वराज्यमें जमीनका बंटवारा कैसे किया जायगा ? बापूने बताया, 'जमीन राज्यकी होगी। मैं मान लेता हूं कि शासन-तंत्र अैसे लोगोंका होगा, जो अिस आदर्शको माननेवाले होंगे। अधिकांश जमींदार खुशीसे अपनी जमीन छोड़ देंगे। जो नहीं छोड़ेंगे, अुनसे कानून छुड़वा लेगा।' मीराबहनने कहा, 'तो पहला काम होगा लोकमतको तैयार करना ?' बापूने अुत्तर दिया, 'लोकमतको तालीम मिल चुकी है। वह आज लगभग तैयार है।'"

हिन्दू कोड बिल

हिन्दू कोड बिलकी शुरूकी स्थितिमें मैंने अुसके मुख्य सिद्धान्तोंका 'हरिजन'में समर्थन किया था। अुसके बाद अिस बिलमें कअी फेरफार हुअे हैं। मैं मानता हूं कि अिन फेरफारोंके कारण बिलमें सुझाये गये मूल सुधार बहुत बड़ी हद तक नरम हो गये हैं। अुसमें ताजेसे ताजे फेरफार क्या हुअे हैं, यह मैं नहीं जान सका हूं।

अिन फेरफारोंके बाद भी अिस बिलके बारेमें काफी मतभेद है। यह मतभेद केवल अलग-अलग पार्टियोंके बीच ही नहीं, बल्कि खुद कांग्रेसमें भी मौजूद है और दोनों पक्षोंका मार्गदर्शन कांग्रेसके बड़े-बड़े नेता लोग कर रहे हैं। अिस मतभेदके कारण ही बिलके पास होनेमें अितनी देर हुअी है और वह टुकड़े-टुकड़ेमें पास हो रहा है।

अुत्तराधिकार, विवाह, तलाक, गोद लेना, संयुक्त परिवार और स्त्रियोंके अधिकारोंके बारेमें हिन्दू कानून देशके अलग-अलग भागोंमें अलग-अलग है। लेकिन हर जगह अुसका अेक सामान्य लक्षण यह है कि वह हर प्रदेशमें बड़ा पेचीदा और अुलझनभरा है और अिस कारणसे वकीलों और अुनके दलालोंकी खूब वन आती है। यह चीज ठेठ १९११-१२ में मैंने समझ ली थी, जब मैं सोलीसीटरके यहां अुम्मीदवार कारकुनकी तरह काम करता था। हिन्दू कानूनकी तुलनामें मुस्लिम कानून और भारतीय अुत्तराधिकार कानून ज्यादा सीधे-सादे हैं, मुकदमेबाजीकी अुनमें बहुत कम गुंजाअिश है और वे स्त्रियोंके साथ ज्यादा न्याय करनेवाले हैं। खोजाओं, कच्छी मेमनों और बरारकी तरफकी कुछ ग्रामीण मुसलमान जातियोंको अूपरके मामलोंमें रिवाजके मुताबिक हिन्दू कानून लागू होता है। जिन जातियों पर मुस्लिम कानून पूरी तरह लागू होता है, अुनके बनिस्बत अिन खोजा वगैरा जातियोंसे वकीलोंको खूब पैसा मिलता है। हिन्दुओंमें जब खास करके कोअी धनी आदमी बिना पुत्रका मर जाता है और अपने पीछे मां, विधवा पत्नी, लड़की या विधवा बहूको अपने नजदीकके रिश्तेदारोंके तौर पर छोड़ जाता है, तब वकीलोंकी पांचों अुंगलियां घीमें होती हैं। मुझे अिसमें जरा भी शंका नहीं कि आजके समाजकी जरूरतोंको देखते हुअे पुराना हिन्दू कानून अब पीछे पड़ गया है।

लेकिन अिस सम्बन्धमें मुझे गांधीजी, विनोबाजी या अपने दूसरे साथियोंके साथ चर्चा करने और अुनके विचार जाननेका मौका नहीं मिला था। अिसलिअे १८ नवम्बर, १९५१ के 'हिन्दुस्तान टाअिम्स' में नीचेकी रिपोर्ट पढ़कर मुझे खुशी हुअी :

> "आज दोपहरमें (१६ नवम्बर) राजघाट पर स्त्रियोंकी जो सभा हुअी, अुसमें आचार्य विनोबा भावेने हिन्दू कोड बिलका अपने भाषणमें पूरा-पूरा समर्थन किया।
>
> "अुन्होंने कहा, अिस बिलमें अैसी कोअी बात नहीं, जो हिन्दूधर्मके खिलाफ हो। वह स्मृतियोंका संकलन ही है। याज्ञवल्क्य स्मृति जैसे हिन्दू धर्मशास्त्रों द्वारा स्त्रियोंको अपने पिताके घरोंमें पैतृक संपत्ति पानेके कुछ अधिकार दिये गये हैं। यह बिल प्रगतिशील सुधारका कदम है, जो स्त्रियोंको पुरुषोंके बराबर अधिकार देना चाहता है। आजकी बदली हुअी परिस्थितियोंमें अैसा सुधार जरूरी है।
>
> "बिलमें तलाककी भी अेक धारा है। लेकिन अुससे स्त्रियोंको घबराना नहीं चाहिये। भारतीय स्त्रियां निःस्वार्थ सेवा और त्यागका मार्ग जानती हैं। तलाककी धारासे अुनकी मनोवृत्ति बदलेगी नहीं। मैं अैसे बीससे ज्यादा पुरुषोंको जानता हूं, जिन्होंने अपनी कोढ़ी पत्नियोंको छोड़ दिया है, लेकिन स्त्रियोंने अपने कोढ़ी पतियोंको नहीं छोड़ा।"

वर्धा, १६-१२-'५१ कि० घ० मशरूवाला
(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

हरिजनसेवक
२९ दिसम्बर १९५१

सामाजिक बुराअियां

सिनेमाके अभद्र चित्रों, रेडियो पर अश्लील गीतों, अुत्तेजक कहानी-साहित्य, कामोद्दीपक दवाओं, असभ्य विज्ञापनों, और कुरुचिपूर्ण तसवीरों, कार्टूनों, समाचारों और शब्द-पहेलियों जैसी जुआ-चोरियोंकी आजकल काफी बाढ़ आ गअी है। संस्कारी पाठकोंका जी अिससे दुखता है और कअी जाग्रत-चित्त भाअी अिन अनैतिक और समाजके लिअे हानिकर बराअियोंकी ओर मेरा ध्यान खींचते रहते हैं। वे चाहते हैं कि मैं 'हरिजन' पत्रोंके द्वारा अिन बुराअियोंका तीव्र विरोध बारबार करता रहूं। अिन पत्र-लेखकोंमें प्रायः शिक्षक-वर्गके लोग होते हैं और स्वभावतः अुन्हें अिनसे बड़ी अुद्विग्नता होती है। वे देखते हैं कि 'कला और संस्कृति' के अिन वंचक साधनों द्वारा शैतान अुनके सुकुमार-चित्त विद्यार्थियोंका कैसा अनिष्ट कर रहा है।

अिन पत्रलेखकोंकी अिस अिच्छाकी मैं कद्र करता हूं और सोचता हूं कि अगर अुसे पूरी करनेके लिअे मेरे पास आवश्यक शक्ति और प्रभाव तथा 'हरिजन' पत्रोंमें अुतना स्थान होता, तो कितना अच्छा होता। लेकिन यह सब होने पर भी, तब तक अिसका कोअी फल नहीं निकलेगा, जब तक कि हर मुहल्लेमें सुधारकोंका अैसा अुत्साही और क्रियाशील दल न हो, जो न सिर्फ अपने घरों और अपने पुस्तकालयोंमें अिन सब अनिष्टकारी बुराअियोंका प्रवेश न होने दे, बल्कि अपने मित्रों और पड़ोसियोंमें भी अुनके खिलाफ प्रचार करे और अिस तरह अेक प्रबल लोकमतका निर्माण करे। यहां-वहां कुछ समाचारपत्र, जिनकी हैसियत ज्यादा नहीं है और प्रसिद्धि भी कम है, अिस दिशामें सराहनीय सेवा कर रहे हैं। अैसे पत्रोंकी संख्या ज्यादा होती, तो बहुत अच्छा होता। लेकिन वे बहुत गरीब हैं, मुश्किलसे चलते हैं। और यहां अश्लील साहित्य और जुआचोरी पर पनपनेवाले पत्र हजारोंकी संख्यामें खपते हैं, तथा अुनकी संख्या भी ज्यादा है। अिस परिस्थितिसे जनताकी नैतिक भावनाकी कमजोरी सूचित होती है।

अिसीलिअे ये नैतिक सुधारक सरकारी सहायता चाहते हैं। लेकिन अुन्हें जानना चाहिये कि अच्छी जनतंत्रवादी सरकार अेक चीज है, और नैतिक दृष्टिसे निर्दोष, सदाचारको बढ़ावा देनेवाली सरकार दूसरी चीज है। जनतंत्रवादी सरकार तो लोकमतके पीछे चलती है — फिर वह लोकमत नैतिक या धार्मिक दृष्टिसे अुन्नत हो या नीचा हो। जनताका नैतिक और आध्यात्मिक दर्जा अुठानेमें सरकार यहां-वहां कुछ बाधायें दूर कर सकती है, लेकिन यदि लोकमत तैयार न हो तो अिस दिशामें कुछ कर दिखाना अुसके लिअे शक्य नहीं होता। बेशक, अेक सीमा तक सरकारी नीति और अुत्तम मंत्री, तथा नेता भी नैतिक सुधारके काममें मदद कर सकते हैं; वे अगरचे अिन बुराअियोंके खिलाफ कानून नहीं बना सकते, तो भी अितना तो कर सकते हैं कि अिन प्रदर्शनोंको कोअी आश्रय न दें, और अैसे समारोहोंका न तो अुद्घाटन करें और न अुनमें अुपस्थित रहें। लेकिन अिसके लिअे भी लोकमतका दबाव चाहिये। अिसलिअे समाज-नीतिके सुधारकोंको सबसे पहले नैतिक सुधारोंके पक्षमें विस्तृत लोकमत तैयार करना चाहिये। अुसके बाद ही सरकार अुसके लिअे कुछ कर सकती है।

मुझे लगता है जो लोग मुझे अिस विषय पर लिखनेके लिअे हमेशा कहते रहते हैं, वे मेरी शक्ति और प्रभाव बहुत ज्यादा मानते हैं। मान लीजिये कि मैं वैसा ही हूं जैसा वे मुझे मानते हैं, तब भी किसी आन्दोलनके लिअे अुपयुक्त समयकी आवश्यकता होती है। आज सारा देश चुनावकी बीमारीमें व्याप्त हुआ है। अच्छे-अच्छे राजनीतिक नेताओंकी, और समझदार लोगों तथा जनताकी भी यही हालत है। चुनावका बुखार जब तक नहीं अुतरता और देश जब तक साधारण जीवन पर नहीं आता, तब तक मेरी सलाह है कि अिस संक्रामक बीमारीके प्रकोपसे जो बच गये हैं, वे धीरज रखें और फिलहाल अिन मरीजोंकी जो सेवा-शुश्रूषा अुनसे हो सकती हो, करें।

वर्धा, १२-१२-'५१ कि० घ० मशरूवाला

(अंग्रेजीसे)

हिन्दी-साहित्यिकोंकी अपील

आचार्य सन्त श्री विनोबा भावेने जो सर्वोदय-यात्रा आरम्भ की है, वह अुसी अहिंसक क्रान्तिका स्वाभाविक प्रसार है, जिसका सूत्रपात गांधीजीने किया था, तथा जिसके द्वारा हमारा देश राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करनेमें सफल हुआ। किन्तु हम अपने लिअे नूतन समाजकी रचना किस प्रकारसे करें, यह समस्या देशके सामने अब भी अपना समाधान खोज रही है। समता और सामाजिक न्याय अिस भावी समाजके लक्ष्य हैं। किन्तु अिस लक्ष्यकी प्राप्तिके लिअे यदि हम हिंसक साधनोंका आश्रय लेते हैं, तो हमारी वह अहिंसक परम्परा विनष्ट हो जायगी, जो हमें गांधीजीसे मिली है तथा जो भारतकी सनातन संस्कृतिका सार है। अिसके विपरीत, यदि हम अपना मार्ग निश्चित रूपसे निर्धारित करके अुस पर अविलंब ही अुत्साहसे चलना आरंभ नहीं करते हैं, तो हम अपनी निष्क्रियता और असावधानताके फलस्वरूप हिंसाके आवर्तोंमें भी ग्रस्त हो जा सकते हैं। अैसी स्थितिमें विनोबाजीने जो प्रयास आरंभ किया है, अुसे हम आशा और अुत्साहसे देखते हैं तथा हमें अैसा मालूम होता है कि यही वह मार्ग है जिसे हमें तुरंत अपना लेना चाहिये और जिसमें से आवश्यकतानुसार हमें नये-नये मार्ग आपसे-आप मिलते जायेंगे।

अतअेव हमारी प्रार्थना है कि देशकी जनता विनोबाजीके अिस महान प्रयासमें हार्दिक और सक्रिय सहयोग प्रदान करे, जिससे अहिंसक क्रान्तिकी सभी मंजिलोंको हम शांतिके साथ तय कर सकें, तथा जिस प्रकार हमने अहिंसक अुपायों द्वारा अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करके सभ्यताके सामने अेक नया आदर्श रखा है, अुसी प्रकार समत्व और सामाजिक न्याय पर आधारित नये समाजकी रचना करके हम विश्वको यह भी बतला सकें कि जिस समत्वकी स्थापनाके लिअे रक्तपातकी प्रक्रिया आवश्यक समझी जाती है, अुसकी अुपलब्धि हम शान्ति, प्रेम और अहिंसासे भी कर सकते हैं और यही मार्ग अधिक मानवीय और श्रेष्ठ है।

विशेषतः अपने पत्रकार बन्धुओंसे हमारी प्रार्थना है कि वे लेखों, संवादों और टिप्पणियों आदिके द्वारा देशमें वह वातावरण अुत्पन्न करनेमें सहायक हों, जो अिस अहिंसक क्रान्तिकी प्रगति और सफलताके लिअे आवश्यक है।

विनीत

मैथिलीशरण गुप्त	सियारामशरण गुप्त
महादेवी वर्मा	वृन्दावनलाल वर्मा
रामधारीसिंह 'दिनकर'	गंगाप्रसाद पांडेय
रायकृष्णदास	बाबू राघवदास

(दिसम्बरके 'सर्वोदय' से)

www.vinoba.in

हड्डियोंका निर्यात – २*

अूपरसे सरकारका कहना बिलकुल ठीक जान पड़ता है। वह हड्डियोंके कंकड़ोंका निर्यात करती है, तो बदलेमें तैयार रासायनिक खाद और हमारे लिअे आवश्यक बहुमूल्य डालर भी तो प्राप्त करती है। लेकिन बारीकीसे देखिये तो मालूम होगा कि यह सौदा महंगा है। अलादीनकी मांने अपने लड़केका जादूका लैम्प देकर अूपरसे ज्यादा चमक-दमकवाला परंतु मामूली लैम्प खरीद लिया था। यह सौदा भी वैसा ही है। अमेरिका, पेरू आदि देशोंके आदिवासी युरोपीय व्यवसायियोंसे कांच, मूंगेकी मालायें और शराब आदि लेकर अपनी जमीन और सुवर्ण-राशि अुन्हें दे डालते थे। हम भी अैसी ही भूल कर रहे हैं।

क्षणभर माना कि हड्डियोंका पूरा अुपयोग करनेके साधन हमारे पास नहीं हैं। हड्डियोंके आधार पर जो रासायनिक अुद्योग चलते हैं, वे अभी यहां नहीं खोले गये हैं। लेकिन सोना शुद्ध करनेके साधन न हों, तो क्या कोअी अपना खानसे निकला हुआ अशुद्ध सोना नकली सोना लेकर दे देगा? अशुद्ध सोना अशुद्ध होते हुअे भी सम्पत्तिका मूल्य रखता है। वही बात हड्डियोंकी है। अिसके सिवा, बहुत आधुनिक साधन न होते हुअे भी हड्डीका अनेक अुद्योगोंमें तात्कालिक अुपयोग हो सकता है। अुपयोग न होने पर भी वह बरबाद नहीं होगी। खेती योग्य जमीनमें अुसे गाड़ दिया जाय, तो धीरे-धीरे वह अुस मिट्टीकी अुर्वरता बढ़ायेगी। कृत्रिम रासायानिक खाद जल्दी खराब हो जाती है, जमीनमें झूठा जोश पैदा करती है, और कुछ ही वर्षोंमें अुसका सर्वनाश कर डालती है। अनुभवसे सिद्ध हुआ है कि कृत्रिम खाद शराब और अफीमकी तरह हैं। घोड़ोंसे जिस तरह शराब और अफीम देकर ज्यादा मेहनत कराअी जाती है, अुसी तरह कृत्रिम खादके प्रभावमें जमीनकी हालत होती है। कुछ समयके बाद वह बिलकुल निकम्मी हो जाती है।

कहा जाता है कि कच्ची हड्डियोंको कूटनेके लिअे बड़ी-बड़ी मशीनें चाहियें। लेकिन अैसी बात नहीं है। मुझे बताया गया है कि श्री वालुंजकरने अिस कामके लिअे अेक छोटीसी मशीन तैयार कर ली है। अुसे आसानीसे यहां-वहां लाया-ले जाया जा सकता है। दिल्लीमें केन्द्रीय खेती-विभागके सामने अुसका प्रयोग भी हो चुका है, और तब यह सिद्ध हो गया है कि गांवोंमें हड्डी कूटनेके लिअे अुसका अच्छा अुपयोग हो सकता है।

हड्डियोंको तोड़ने और कूटनेके दूसरे अुपाय भी हैं, यद्यपि अुनमें कुछ हिस्सा बरबाद जाता है। अुदाहरणके लिअे, यह तो काफी जानी हुअी बात है कि अगर हड्डियोंको कोयलेकी तरह आधा जला लिया जाय, तो अुन्हें हमारी प्रचलित बैल या पाड़ोंकी चक्कीमें पीसा जा सकता है। यह काम हरअेक गांवमें हो सकता है, और खादके लिअे अुस चूरेका सीधा अुपयोग हो सकता है। हड्डियां कूटनेकी बड़ी फैक्टरियाँ बम्बअी, कलकत्ता जैसे बड़े शहरोंमें हैं। तो होता यह है कि कच्ची हड्डियां पहले गांवोंसे और अुनके आसपाससे शहरोंमें आती हैं। वहां अुन्हें कूटकर कंकड़ और चूरा (grist and meal) बनाया जाता है। कंकड़ोंका निर्यात कर दिया जाता है, और चूरा फिर गांवोंमें लौटा दिया जाता है। हड्डियां अिकट्ठी करनेवाला देहाती अपनी अिकट्ठी की हुअी कच्ची हड्डियां ३ रु० ८ आ० प्रति मन बेचता है, लेकिन हड्डियोंका चूरा १० रु० प्रति मनसे कम कीमत पर नहीं बेचा जाता। अिस महंगी कीमत पर अुसे बड़े किसान या जमींदार ही खरीद सकते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि अकसर यह सारी बहुमूल्य खाद चाय, कॉफी आदिकी खेती करनेवाली मालदार कम्पनियां खरीद लेती हैं। अिस तरह हड्डियोंके अिस धनका लाभ न तो गांवके हड्डियां अिकट्ठा करनेवालेको और न गांवके किसानको मिलता है, यद्यपि वह होता है गांवोंमें ही।

शायद अिसका कारण यह बताया जायगा कि हमारे किसान हड्डियोंकी खादका महत्त्व नहीं जानते। यह बात मान ली जाय तो भी अिसका अुपाय तो यह होगा कि हम अुन्हें अिसकी तालीम दें। जहां तक मैं जानता हूं, किसानोंमें हड्डियोंकी खादके अुपयोगके खिलाफ सामान्यतः कोअी नफरत नहीं है। राजस्थानके किसानोंके विषयमें अवश्य यह कहा जाता है कि वे हड्डीकी खादका अुपयोग नहीं करना चाहते। मुझे लगता है कि वहां भी सब किसान अैसे नहीं होंगे। क्योंकि पुरानी चालके और अूंची जातिके हिन्दू घरोंमें भी हड्डीसे बनी हुअी बटन, कागज काटनेकी छुरी, चाकू और कांटे आदि चीजोंका खुलकर अुपयोग होता है। चमड़ेका तो होता ही है। मछलियोंकी खादका अुपयोग, जहां वह मिलता है वहां होता ही है। हड्डीकी खादका अुपयोग नहीं होता, तो अिसका कारण विरोधकी भावनामें नहीं, ज्ञानकी कमीमें ही होगा। आखिर हड्डियोंका अुपयोग अितिहास-पूर्व कालकी सभ्यताकी देन है। अुसके पीछे अेक दीर्घ परम्परा है, और सदियों तक मनुष्य अुनका व्यवहार करता रहा है। चमड़ा, सींग, दांत आदिका व्यवहार घरोंके अंदर और अिलाजके काममें यदि खुलकर होता है, तो भला कोअी खेतोंमें हड्डीकी खादका अुपयोग करनेसे क्यों अिनकार करेगा, अगर अुसे अिस चीजकी अुपयोगिताका ज्ञान हो जाय और सस्ते दामों अुसकी प्राप्तिकी व्यवस्था कर दी जाय?

हड्डियोंसे घर-गृहस्थीकी छोटी-छोटी वस्तुअें बनानेमें खर्चीले औजारों या कल-कारखानोंकी जरूरत नहीं होती। थोड़ासा प्रोत्साहन दिया जाय, तो अिस श्रेणीके कुछ गृह-अुद्योग और ग्राम-अुद्योग तो अेकदम खोले जा सकते हैं। श्री सतीशबाबू और श्री वालुंजकर जैसे विशेषज्ञ ग्लू, जिलैटिन, हड्डियोंका चारकोल (कोयला) आदि रासायनिक द्रव्योंके अुत्पादनके लिअे भी हमें छोटे-छोटे यंत्र तैयार करके दे सकते हैं। आज अिन्हीं अुद्योगोंके लिअे हड्डियोंके कंकड़ोंका निर्यात किया जाता है।

खेतीके अुद्योगकी दृष्टिसे देखें, तो हड्डियोंके निर्यातका बड़ा परिणाम यह हुआ है कि हड्डियोंकी कीमत बहुत ज्यादा चढ़ गयी है। विदेशोंके बड़े व्यापारी आसानीसे यह महंगी कीमत दे सकते हैं, लेकिन भारतीय किसान या हड्डीकी वस्तुओंके निर्माणका व्यापार करनेवाले या करनेकी अिच्छा रखनेवाले भारतीय व्यापारी अितनी महंगी कीमत नहीं दे सकते। अिसलिअे वे लोग यह चीज खरीदनेमें असमर्थ हो जाते हैं। हड्डियोंको गांवोंमें यहां–वहांसे बीनकर अिकट्ठा कर लिया जाता है और यह काम किसी हरिजन या आदिवासी मजदूरको दी जानेवाली मजदूरी जितने खर्चमें हो जाता है। अब अितनी सस्ती चीजकी कीमत यदि विदेशी कम्पनियां अेकाअेक बहुत ज्यादा बढ़ा दें, तो गरीब भारतीय किसान या हड्डीकी वस्तुअें बनानेवाला भारतीय कारीगर सिवा अिसके क्या कर सकता है कि वह लाचार बनकर यह देखता रहे कि हमारी रेलें हड्डियोंके ढेरके ढेर ढो-ढोकर न जाने कहां लिये जा रही हैं? अिसके सिवा, अिसमें यह संतोष भी तो नहीं है कि हड्डियां बीननेका काम जो सचमुच करता है, अुस आदिवासीको ही कुछ ज्यादा मजदूरी मिलने लगी हो; न यही हुआ है कि हड्डियां कूटने और कंकड़ बनानेका काम गांवका व्यापारी करने लगा हो और अुसे महंगाअीका लाभ मिला हो। अिस महंगी कीमतका अधिकांश लाभ तो अुस दलालको मिलता है, जो अिकट्ठा करनेका काम करवाता है या शहरके अुन व्यापारियोंको मिलता है, जो अुसे कुटवाकर अुसके कंकड़ बनवाते हैं। जो मीलों भटककर सारा मसाला अिकट्ठा करता है, वह मेहनत करनेवाला मजदूर तो जहांका तहां रहता है।

दूसरी ओर सरकार निर्यातको प्रोत्साहन देती है, कंकड़ोंकी अपेक्षा कच्ची हड्डियोंके ढोनेका किराया कम रखती है, और अिस

* अिसका पहला भाग ता० १–१२–'५१ के अंकमें छपा है।

www.vinoba.in

तरह निर्यातका व्यापार चलानेवालेकी मदद करती है। जहाजी कम्पनियां जो करती हैं, यह नीति अुससे अुलटी है। यह सब किया जाता है ज्यादा डालर कमानेके लिअे। पर साथ ही सरकार किसानसे यह आग्रह भी करती है कि वह खेतमें ज्यादा खाद डाले, और अिसके लिअे वह 'सुपर-फास्फेट' और 'नाअिट्रेट' आदि रासायनिक खाद बाहरसे बड़ी मात्रामें मंगवाती है। और, कहा जाता है कि यहां अकसर वह खुद नुकसान सहकर सस्ती कीमत पर बेचती है। हमारा किसान यह नहीं जानता कि दवाओं जैसा तीव्र प्रभाव रखनेवाली अिन खादोंको मिट्टीमें किस मात्रामें मिलाया जाय। वह खेतकी फसलको नुकसान न पहुंचाये, अिसलिअे अुसे स्वाभाविक सजीव खादोंके साथ मिलाना जरूरी होता है। हमारे किसानके पास तो यह स्वाभाविक खाद भी हमेशा नहीं होती।

अिसमें कोअी शक नहीं कि खेतीके लिअे अयोग्य स्थानोंमें जो हड्डियां पड़ी रहती हैं, अुन्हें अिकट्ठा करवानेकी पूरी कोशिश होनी चाहिये। मवेशीके मालिकों और ग्राम-पंचायतोंसे यह कहा जाना चाहिये कि वे अपने जानवरोंको जहां कहीं वे मरते हैं, वहीं न पड़ा रहने दें। यदि वे कुछ और नहीं कर सकते, तो अितना ही करें कि मृत पशुको अपने खेतमें या गांवके किसी सामुदायिक खेतमें गाड़ दें। मृत जानवर यहां-वहां पड़ा रहे, और गीध या सियार अुसे चीथ-चीथ कर खायें और अुसकी हड्डियां दूर-दूर तक बिखरायें — जहांसे अुन्हें अिकट्ठा करना मुश्किल हो जाता है — अिससे तो यही अच्छा है कि अुसे खेतकी मिट्टीमें दफना दिया जाय। वहां अुसका मांस धीरे-धीरे मिट्टीमें मिल जायगा, और बादमें हड्डियोंकी खाद भी बनेगी ही। विदेशी व्यापारी अिन हड्डियोंका अितना महंगा मूल्य देनेके लिअे तैयार हैं, अिसीसे सिद्ध है कि यह सम्पत्ति कितनी मूल्यवान् है। अगर विदेशी लोग अुसका अुपयोग सौ धन्धोंमें कर सकते हैं, तो हम भी अुसके अेक दर्जन धन्धे तो अेकदम खोल ही सकते हैं तथा धीरे-धीरे अुनकी संख्या बढ़ायी भी जा सकती है।

अिस तरह किसी भी दृष्टिसे देखें, हड्डियोंके निर्यातकी नीति राष्ट्रके हितमें नहीं है, बल्कि नुकसानदेह है।

वर्धा, १२-११-'५१ कि० घ० मशरूवाला

(अंग्रेजीसे)

मि० चर्चिलका जवाब

२८, हाअिड पार्क गेट,
लंदन, अेस० डब्ल्यु० ७,
१५ नवम्बर, १९५१

प्रिय महोदय,

अपनी संस्मरण-सम्बन्धी पुस्तकमें मि०चर्चिलने महात्मा गांधीजीके बारेमें जो जिक्र किया है, अुसके सम्बन्धमें आपने अपनी, डॉ० गिल्डरकी, डॉ० नय्यरकी और श्री प्यारेलालकी सहीसे ३० सितम्बरको अुन्हें जो पत्र लिखा, अुसके लिअे वे चाहते हैं कि मैं अुनकी ओरसे आपका आभार मानूं और अुस पत्रका जवाब देनेमें जो अितनी ज्यादा देर हुअी अुसके लिअे आपसे क्षमा मांगूं। अुन्हें यकीन है, आप अिस बातको समझ सकेंगे कि अभी हालके आम चुनावके कारण अुनका पत्रव्यवहार अितना ज्यादा बढ़ गया था कि अुनकी अिच्छा रहते हुअे भी वे जल्दीसे जल्दी आपके पत्रका जवाब नहीं दे सके।

आपके भेजे हुअे सबूतोंके लिअे मि० चर्चिल आपके अत्यन्त आभारी हैं और मेरे जरिये आपको यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि अुनके संस्मरणोंकी आगामी आवृत्तियोंके लिअे वे अिन सबूतोंके बारेमें सावधानीसे विचार कर रहे हैं।

भवदीय

डॉ० बी० सी० रॉय, अेम० डी० (कल०), (सही) पढ़ी नहीं जाती
डी० अेस-सी०
प्राअिवेट सेक्रेटरी

(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

विनोबाकी अुत्तर भारतकी यात्रा — ९

दतिया

अब पुनः अेक वार विंध्यप्रदेशमें प्रवेश करना था। झांसीसे १७ मील चलकर हम दतिया पहुंचे। बीचमें अेक गांव पर देहातके लोगोंने स्वागत किया व ४ अेकड़ जमीन दी। विनोबाजी तो आगे निकल आये। हमारे अेक साथी दानपत्र लिखाने बैठ गये। लेकिन दानपत्र पूरा होते होते सात अेकड़ यानी चौदह बीघा जमीन हो गयी।

दतियामें २४ व्यक्तियोंने मिलकर ७८ अेकड़ जमीन दी। विनोबाने देखा कि कार्यकर्ताओंको जैसा काम करना चाहिये था, अुन्होंने नहीं किया है। अतः थोड़ा आगाह करनेकी दृष्टिसे कहा: "क्या यहां भी तेलंगानाकी तरह सर्वोदयके पहले आप सर्वनाश चाहते हैं? कम्युनिस्ट चीनके आगे तिब्बत तक तो पहुंच गया है। क्या आप हिन्दुस्तानके लिअे भी वही तरीका पसंद करते हैं? आपको ही यह सब तय करना है। जमीनका मसला तो हल होकर ही रहेगा। अगर प्यास लगी है और स्वच्छ पानी नहीं मिल रहा है, तो लोग गंदा पानी पीकर ही क्यों नहीं, प्यास तो बुझावेंगे ही।"

अपनी चेतावनीको जारी रखते हुअे कहा: "मैं देख रहा हूं कि लोग अपने अपने घरेलू कामोंमें व्यस्त हैं। सारेके सारे सुस्त बन गये हैं। अुत्कर्षके शिखर पर पहुंचनेके बाद सुस्ती आवे तो समझमें भी आ सकती है। परंतु शुक्लपक्ष शुरू होनेके पहले ही पूर्णिमाके बादकी सुस्ती समझमें नहीं आ सकती। हमको तो हमारे देशकी सारी रचना बदल देनी है। आजकी सारी रचना कुटुंब-निष्ठ और अिसलिअे अेक हद तक स्वार्थी बन गयी है। कुटुम्ब-व्यवस्थाकी भी अेक समय आवश्यकता थी। परंतु कुटुम्ब-व्यवस्था रुंध गअी है और हम आगे नहीं बढ़ रहे हैं। अिसलिअे हमारा विकास रुक-सा गया है।'

फिर भूमिदान-यज्ञमें सहयोग देनेकी प्रेरणा देते हुअे कहा:

"अगर हम पक्षभेद, वृत्तिभेद, जातिभेद सब छोड़कर लोगोंके पास पहुंचें, तो जमीन जरूर मिलेगी। और अुसके कारण जो हवा बनेगी, अुससे बच्चा भी अछूता नहीं रह पायेगा।"

जगह जगह अिस भूदान-यज्ञकी कल्पनाने लोगोंको कैसे सात्विक भावकी प्रेरणा दी, और लोगोंने कैसा सात्विक दान दिया, अुसके अनेक अुदाहरण विनोबाजीने लोगोंको बताये। अंतमें कहा: "हम रोटी कब तक और किस-किसको देते रहेंगे? हमें तो अुत्पादनके साधन ही लोगोंके पास पहुंचा देने चाहियें। और सालंकृत कन्या-दानकी तरह आवश्यक सुविधाओंके साथ भूदान करना चाहिये। हम 'अतिथिदेवो भव' कहते हैं। यह दरिद्रनारायण अैसा अतिथि है कि बेचारा मांग भी नहीं सकता। मेरे मुखसे भगवान अुसीकी बात कहला रहा है। आप सबको अिस महान क्रांतिकारी काममें जुट जाना चाहिये।"

आगे मध्यभारतकी यात्रा शुरू होनेवाली थी। श्री बैजनाथ महोदय विनोबाको लेने आ पहुंचे थे। परन्तु और भी पांच छः कार्यकर्ता अिस अुद्देश्यसे आये थे कि यात्रामें विनोबाके साथ हो लें। अनुभव यह हो रहा था कि भूदान-यज्ञका संदेश गांव गांव जैसा और जितना पहुंचना चाहिये नहीं पहुंच पाता। कार्यकर्ताओंका अभाव और कल्पना-शक्तिका भी अभाव। अिसलिअे हमने अिन भाअियोंको सुझाया कि वे देहातोंमें जाकर भूदान-यज्ञका संदेश सुनावें। विनोबाका आशीर्वाद लेकर ये कार्यकर्ता गण देहातोंके लिअे निकल पड़े।

अुपरायां

सेंध नदी पार करके मध्यभारतमें प्रवेश करना था। दतियाके बाद अेक और गांव विंध्यप्रदेशका रह गया था, अुपरायां। विनोबाको यहां भी पचास बीघा जमीन मिली। विनोबाने गांववालोंको प्रेमपूर्वक

रहनेके लिअे कहा। गांवके सब बच्चे अपने बच्चे हैं, गांवमें जो भूखे हैं वे हमारे ही भाअी हैं। अुनको खिलाकर ही सोना है।

"बस यही बात बताते हुअे मैं गांव गांव घूम रहा हूं। दुनियामें हम आये तब रोते रोते आये थे। जाते समय हंसते जा सकें अैसा काम करना चाहिये। हंसते हंसते वही जा सकता है, जिसने दुनियामें केवल प्रेम ही दिया है और केवल प्रेम ही पाया है।

दतियाका जिक्र करते हुअे कहा: "दतिया तो देनेवालेको कहते हैं। पर दतियावालोंने बहुत कम जमीन दी। मैंने कार्यकर्ताओं को थोड़ा धमकाया भी। परंतु क्यों धमकाया? केवल प्रेम-वश। और मेरे धमकानेके बावजूद लोगोंने जो सौ अेकड़ जमीन दी, वह भी क्यों दी? मेरा अुन पर सिवा प्रेमके क्या अधिकार था? अेक अेक अिंच जमीनके लिअे बाप-बेटेमें लड़ाअी होती है। फिर लोग मुझे जमीन क्यों देते हैं? क्या यह सब प्रेमके सिवा हो सकता है? मैं आपसे पूछता हूं कि क्या अिस तरह आज तक आपके गांवमें कोअी जमीन मांगनेवाला आया था? पर अब मेरी ओरसे लोग आयेंगे और आप जो जमीन देंगे, अुसे बांटनेके लिअे भी आयेंगे। तब अुन्हें और जमीन मिलेगी। आज अिसी तरह हैदराबादमें काम चल रहा है। और नित्य नयी जमीन वहां मिल रही है। जब तक अेक भी अैसा आदमी बिना जमीनका रह जाता है, जो जमीन जोतना चाहता है, तब तक यह भूदान-यज्ञका काम जारी रहेगा। अिसलिअे आप लोग जमीन दीजियेगा। 'हाथ दिये कर दान रे'। मनुष्यको तब तक समाधान नहीं होता, जब तक वह अपने हाथसे कुछ दान न कर दे। यह भूदान देनेवालेको और पानेवालेको अूंचा अुठानेवाला कार्यक्रम है।"

डंबरा

सबेरे पांच बजे सेंध नदीको पार करके विनोबा करीब ८ बजे डंबरा पहुंचे। मध्यभारतके रचनात्मक कार्यकर्ता और बहुतसे कांग्रेस कार्यकर्ता भी सरहद पर स्वागत करने आये थे।

शामकी प्रार्थनाके समय अेक भाअीने सूतकी माला अर्पण की। अुस मालाको देखकर विनोबाके दु:खका पार न रहा। अपने आपसे बोलते हों, अिस तरह अुन्होंने शुरू किया: "*यह सूत बैल बांधनेके लिअे काम आ सकता है। अिस तरहका सूत देनेसे न तो देनेवालेकी अिज्जत बढ़ती है और न लेनेवाले की।*"

फिर बापूका अुल्लेख करके कहा: "गांधीजीने बरसों सूतके बारेमें कहा, स्वयं नित काता, बीमारी और अुपवासोंमें भी काता। राजनैतिक बैठकोंमें काता। और मुलाकातोंका तांता लगा रहता तब भी काता। और आखिरी दिन वे कातकर ही प्रार्थनाके लिअे गये थे। झंडेमें भी अुन्होंने चरखेको दाखिल करवा दिया। अिस बारेमें शंका होने पर पं० नेहरूने कहा, वह अशोकचक्र चरखेका ही प्रतीक है, और चित्रकी सिमेट्री (सर्वतोभद्रता) साधनेके लिअे वैसा दिया है।"

बापूका और भी जिक्र करते हुअे कहा: "चरखेके बारेमें अुन्होंने कितना लिखा, कितना लिखवाया। चरखा संघकी स्थापना की। खादीमें अनेक प्रकारकी खोजें कीं, और मुझ जैसे पचासों कार्यकर्ताओंको अिस काममें लगा दिया। आखिरमें यहां तक कह दिया कि भगवद् गीतामें चक्रका जो जिक्र है, वह शरीर-परिश्रमका सूचक है।

"अितना जिसके बारेमें कहा, अुस चरखेको प्रतिष्ठित लोगोंने छोड़ दिया। खद्दर किसी तरह पहन लेते हैं। लेकिन आप लोग देखते हैं कि स्वराज आये चार साल हो गये। देशमें कपड़ेका अुत्पादन अेक गज भी नहीं बढ़ा। हां, कालाबाजार जरूर बढ़ा है। यह सारा दृश्य बड़ा दर्दनाक है। और फिर भी प्लानिंग कमीशनवाले चरखेका नाम नहीं लेते। अुन्हें भरोसा भी नहीं कि चरखेसे कपड़ेका मसला हल हो सकता है। भरोसा होगा कैसे? जनतासे कोअी संपर्क बाकी रहा हो, तभी न भरोसा हो सकता है?" अेक भाअीने सवाल किया कि "विज्ञानके अिस युगमें भी चरखेकी जरूरत क्यों?" विनोबाने भी पूछा: "आकाशके अितने बड़े नक्षत्र हैं। फिर भी दीपककी जरूरत क्यों? आकाशके किस नक्षत्रसे घरका दीपक ज्यादा प्रकाशमान है? फिर भी घरके दीपककी स्थानपूर्ति कोअी नक्षत्र नहीं करता। विज्ञान तो बहुत बढ़ा है। परंतु विज्ञानके बावजूद कपड़ेका अुत्पादन नहीं बढ़ा।"

फिर अिसी विज्ञानवाद और यंत्रवादके भ्रमका अपने ढंगसे जवाब देते हुअे कहा: "दिल्लीमें अेक बार मैं चक्की पीसने बैठा। वहां आश्चर्य हुआ कि पवनारकी तरह दिल्लीमें भी चक्की आटा पीसती है। परंतु मांग करने पर भी निर्वासित भाअियोंको चक्की नहीं मिल सकी। लोग कहते हैं कि यंत्र-युग आया है। युग तो हम लावेंगे वही आवेगा। यह हवाअी जहाज, ये मोटरें, ये रेल जबरदस्ती मुझे अुठाकर अपने भीतर बिठा तो नहीं लेतीं। न मेरे पांव ही चलनेसे अिनकार करते हैं। फिर यंत्र-युग कैसा? आत्माकी शक्तिको लोग पहचानते नहीं और कहते हैं कि *यंत्र-युग आया है*। पहचानते नहीं कि हम तो परमेश्वरके अंश हैं। परमेश्वरकी तरह हम भी सृष्टिकर्ता हैं। यह सही है कि अीश्वरके मुकाबलेमें हमारी शक्ति बहुत कम है। पर हैं हम आगकी चिनगारी। कपासके ढेरकी तुलनामें बहुत शक्तिशाली हैं। हम चाहें वैसा रूप सृष्टिको दे सकते हैं। हमें हमारी चेतन-शक्तिका भान नहीं। हम सोचते नहीं कि हम पैंतीस करोड़ हैं। और दस हजार बरसका हमारा अितिहास है। फिर हम लाचारीकी भाषा बोलते हैं। विज्ञान तो हमारी दासी है। अगर हम अुसे कहते हैं कि हमें हाथसे खेती करनेके छोटे छोटे औजार बना दो, तो वह बना देगा। और अगर अुससे कहें कि हमें संहारक हथियार बना दो, तो वह वैसे बना देगा। लोग कहते हैं हम चरखेसे पिछड़ जावेंगे। यह पिछड़ जाना और आगे जाना क्या होता है? अगर मैं हाथसे तरकारी पैदा करूं, जैसा कि पवनारमें हम लोग करते हैं और पौन अेकड़से कम जमीनमें अेक सालमें दस हजार पौंडसे ज्यादा तरकारी अुपजा लेते हैं, तो अिसमें क्या पिछड़ जाना है? आपको मैं निमंत्रण देता हूं कि आप पवनार जाकर हमारा काम देखें।"

अुस सूतकी मालाके कारण विनोबाको यह सब कहना पड़ा। *गांधीजीने तो यह नहीं कहा था कि कहींसे भी किसी भी तरहका* रद्दी सूत कात लिया जाय और वही समर्पण किया जाय। लेकिन अुसमें अुस भाअीका अकेलेका दोष नहीं है। जैसा कि विनोबाने दतियाके मित्रोंसे कहा था, "सारा देश ही सुस्त बन गया है।"

विनोबाने सबको कुछ न कुछ पैदावार करनेका व्रत लेनेको कहा: "आप अैसा व्रत लीजिये, तो आप देखेंगे कि देशका नकशा बदल जावेगा।

"लेकिन पैदावार करनेवालोंके लिअे यह जरूरी है कि वे जमीनके मालिक हों। मैंने गरीब श्रमिकोंके छोटे-छोटे टुकड़ोंमें अुत्तम फसलें देखी हैं। जहां मैंने घास अुगा पाया, वहां समझ लिया कि वह खेत धनवानका होना चाहिये, जो दूसरोंके हाथोंसे काम करवाता है, दूसरोंकी आखोंसे देखता है। मैंने अैसे श्रीमान देखे हैं, जिन्हें बाजरे और गेहूंके पौधोंका भेद मालूम नहीं। श्रीमान और अकल साथ-साथ शायद ही रहते हैं। और आज तो 'मूर्ख-मूर्ख मंत्री कीन्हें, पंडित फिरें भिखारी' वाली बात चरितार्थ हो रही है।"

लोगोंने बहुत प्रेमपूर्वक विनोबाकी बात सुनी, क्योंकि वे भी 'प्रीतिकी रीति' जानते थे, और *जानते थे कि छोटेकी छोटाअी और बड़ेकी बड़ाअी दोनों दूर होना आवश्यक है। प्रेम करनेका* यही सही तरीका है।

और अंतमें सबको जमीन देनेकी अपील करते हुअे कहा कि 'मानवको सारी चीजें मिलें, और प्रेम न मिले तो वह सूख जावेगा। और अगर हम प्रेमभाव निर्माण करें, तो दुनियामें वैकुण्ठ ला सकेंगे। नहीं तो यह दुनिया नरक बन जावेगी। अिसलिअे मैं अधिक नहीं कहता। आप मेरी झोली भर दीजिये। अिसीसे प्रेम-राज्य या राम-राज्य कायम होनेवाला है।" अस्सी भाअियों द्वारा यहां २०८ अेकड़ भूमि मिली। कार्यकर्ताओंने भी सबने थोड़ी थोड़ी दी। जिनके पास नहीं थी, अुन्होंने खरीदकर देनेका वचन दिया। पर प्रायः हर कार्यकर्ताने दी।

www.vinoba.in

शामको फिर कार्यकर्ताओंकी सभा हुअी, ताकि अगले मुकामके अिर्दगिर्दवाले देहातोंमें जाकर कुछ प्रचार किया जा सके। अुत्तर-प्रदेश और विंध्यप्रदेशके मुकाबलेमें यहां बहुत ही कम प्रचार-कार्य आ दिखायी देता था। अिसलिअे कार्यकर्ताओंसे विनोबाने कहा:

"हमारा संदेश पैंतीस करोड़ लोगोंके ७० करोड़ कानोंमें जाना चाहिये। यह कार्य जो आजकल मैंने अुठाया है, विचार-प्रचारका है। अुस विचारको समझनेकी निशानीके तौर पर साथनेवालेसे प्रतीकके रूपमें कुछ न कुछ लेना भी है। अिसलिअे घर-घर हमारा संदेश पहुंच जाना चाहिये, और घर-घरसे कुछ मिलना भी चाहिये। कुछ थोड़े लोगोंसे हमारी थैली भरी जा सकती है, परंतु हमें थोड़ा थोड़ा करके ज्यादा लोगोंसे भी मिलना चाहिये। गांव बड़ा हो तो हम यह देखते हैं कि हमें ज्यादासे ज्यादा कितना मिला। गांव छोटा हो तो हम यह देखते हैं कि ज्यादासे ज्यादा कितने लोगोंने दिया।

"फिर केवल भूदान मिलना ही काफी नहीं है। अुस-अुस गांवके पांच पचीस लोगोंसे हमारा परिचय होना भी जरूरी है।

"अिस सब दृष्टिसे त्रिविध काम होना चाहिये। हमारे पहुंचनेसे पहिले कार्यकर्ताओं द्वारा, हमारे सामने हमारी सभामें हमारे खुदके द्वारा, और हमारे जानेके बाद भी पुनः कार्यकर्ताओं द्वारा, अिस तरह अेक महान और सतत क्रम करने लायक कार्यक्षेत्र सर्वोदयवालोंके लिअे, कांग्रेसवालोंके लिअे और अुन सबके लिअे, जो करना चाहते हैं, खुला हुआ है। सबकी अिससे शुद्धि होनेवाली है। अगर हम लोग जाग जाते हैं तो अच्छा है, नहीं तो हिंसक क्रांतिको कोअी रोक नहीं सकेगा।"

डंबरासे जौरासी गये। वह अेक अत्यंत छोटा गांव है – मुख्यतः ठाकुरोंका बसा हुआ। अेक बड़े मंदिरमें हमें ठहराया गया था।

पासमें आतरीसे कुछ लोग मिलने आये थे, जिनमें वाघ नामके अेक सज्जन 'सर्वोदय' के नित्य पढ़नेवालोंमें से थे। अुन्होंने ग्यारह प्रश्नोंका पर्चा विनोबाजीको दिया। प्रश्न बहुत अच्छे थे। विनोबाने करीब अेक घंटे तक अुनके प्रश्नोंका जवाब दिया। अुत्तर देते वक्त अुन्हें वैसा ही आनंद हो रहा था, जैसा वत्सको देखकर माताको होता है। अेक भी कार्यकर्ता अगर अिस तरह कहीं जुड़ता है, तो अुसके लिअे वे कितनी शक्ति लगा देते हैं!

जौरासीके लोगोंसे विनोबाने कहा: "आपका यह बहुत छोटासा गांव है और मेरे रास्तेमें पड़ता है। यात्राका पुण्य तो पैदल घूमनेसे ही मिलता है। लोगोंका यह खयाल है कि यात्राके लिअे काशी, प्रयाग या बद्री-द्वारका ही जाना चाहिये। परंतु मेरा खयाल अैसा नहीं है। जहां जहां सज्जन लोग हैं, वे सभी स्थान यात्राके योग्य हैं। और अनुभव भी यह हो रहा है कि मुझे जगह जगह सज्जन-संगतिका लाभ मिल रहा है। अभी चार रोज पहले चिरगांवमें सज्जन लोगोंका, भक्त-जनोंका कैसा अनुपम सत्संग रहा! सज्जन-संगति तो अेक क्षणकी भी महान अुपकारक होती है। और मैं देखता हूं कि कभी कभी तो साधारण किसान या स्त्री या बालकमें भी अद्भुत गुणोंका दर्शन होता है। अिस तरह जगह जगह मुझे अिस सत्संगका लाभ मिला है। देहात भारतका हृदय है। और अिस हृदयके समीप पहुंचनेके लिअे पैदल यात्रा ही अेकमात्र साधन है।

फिर अपने कामका अुद्देश्य समझाते हुअे कहा: "हिन्दुस्तानमें सत्पुरुषोंने मेरे पहिले भी यात्राअें की हैं। मैं अुन्हींका काम आगे बढ़ा रहा हूं। फ़र्क अितना ही है कि वे प्रासंगिक धर्म समझाते थे, भूखेको खिलानेका धर्म बताते थे। परंतु अुसमें स्वामित्व-निरसन नहीं होता था। मैं कुछ आगे जाना चाहता हूं। स्वामित्व-दानकी प्रेरणा आप लोगोंको देना चाहता हूं। अेक करोड़ लोगोंकी आजीविकाका स्थायी प्रबंध करा देना अलग बात है। जमीन देना आसान काम नहीं है, जीवन तोड़कर जमीन देना पड़ता है। यानी मेरे विचारको लोग समझ रहे हैं। पचास अेकड़में से दस दस अेकड़ मुझे दे रहे हैं। कहीं कहीं पचासमें से पचीस भी दे रहे हैं। कहीं ३०० में से ७५ दे रहे हैं। अिस सबसे जाहिर है कि मेरे विचारको वे समझ रहे हैं।"

विनोबाजीने लोगोंको समझाया कि जो दुःख और आफतें लोगों पर गुजर रही हैं, वह अिसीलिअे कि हम अीश्वरी योजनाको, जो सार्वभौम दृष्टि है, समझते नहीं है। अुसने सब चीजें सबके लिअे पैदा की हैं। हवा-पानी-रोशनीकी तरह जमीन भी सबकी है। लेकिन हम जमीन पर अपना स्वामित्व बताना चाहते हैं। यह अंधे और आंखवालेका फर्क है। मैं देख रहा हूं कि अेक संकट आनेवाला है। तो जिन्हें खुदकी आंख न हो, वे आंखवालेकी बात तो सुनें। जहां अितनी ज्यादा गरीबी हो, अितना अधिक दुःख हो, दुखियोंके प्रति अैसी अुदासीनता हो, ग्रामोद्योगोंका अभाव हो, वहां संकट कैसे टल सकता है? और फिर भी नेशनल प्लानिंगवाले कहते हैं कि सबको काम देना हमारे लिअे संभव नहीं है। नहीं दे सकते हों तो आप लोग प्लानिंग करते क्यों हैं?"

अंतमें विनोबाने कहा: "पंडित जवाहरलालजी कांग्रेसकी जो शुद्धि करना चाहते हैं, वह त्यागके कार्यक्रमके बिना नहीं हो सकती। आज गांधीजी होते और वे भी अगर त्यागका कार्यक्रम न दे पाते तो शुद्धि नहीं कर पाते। परंतु अुनकी खूबी यह थी कि वे नित्य नूतन त्यागका कार्यक्रम दिया करते थे। आज देशके सामने अिस भूदान-यज्ञके सिवा अैसा कोअी कार्यक्रम नहीं, जिससे निरंतर त्याग और सेवाकी प्रेरणा मिल सकती हो। और अगर कांग्रेसवाले, समाजवादी तथा दूसरे सभी पक्ष अिसे अपनाते हैं, तो सब पक्षोंकी शुद्धि अिससे होनेवाली है। मेरा दावा है कि मेरा जो कार्यक्रम है, अुससे सबको त्यागका मौका मिलनेवाला है। मैं अिसे अपनी पंच वार्षिक योजना कहता हूं। अगर आप सब लोग पांच सालके लिअे अिस काममें जुट जाते हैं और अगर अिस बीच ५ करोड़ अेकड़ जमीन हस्तांतर हो जाती है, तो हिन्दुस्तानमें अेक महान अहिंसक क्रांति हो जाती है।"

शामको मध्यभारतके सभी प्रमुख कार्यकर्ता विनोबाजीसे मिलने आये थे। कल यहांसे लश्कर जाना था। मध्यभारतकी अिस राजधानीसे शुरू होनेवाले सप्ताहका विवरण अगले पत्रमें।

अब तकका भूदान और प्रवास अिन अंकोंसे जानियेगा:

गांव	जिला	प्रदेश	अेकड़
चिरगांव	झांसी	अुत्तरप्रदेश	१५०.४२
बड़ागांव	"	"	९८.८६
झांसी	"	"	१,८६९.९२
दतिया	दतिया	विंध्यप्रदेश	९६.९१
अुपरायां	दतिया	"	४७.९३
डंबरा	गिर्द	मध्यभारत	२३५.००
जौरासी	गिर्द	"	९०.००
		कुल	२५०९.१४ (?)

१२ सितंबरसे अब तकका कुल योग ११,४३८ अेकड़ हुआ है। कुल प्रवास हुआ — ५२८ मील।

दा० मूं०

विषय-सूची

		पृष्ठ
ग्राम-अर्थरचना	विनोबा	३७७
'भगवान, हमें शिक्षा दो!'	कि० घ० मशरूवाला	३७८
जमीन बांटनेके बारेमें बापूके विचार		३७९
हिन्दू कोड बिल	कि० घ० मशरूवाला	३७९
सामाजिक बुराअियां	कि० घ० मशरूवाला	३८०
हिन्दी-साहित्यिकोंकी अपील	मैथिलीशरण गुप्त व दूसरे	३८०
हड्डियोंका निर्यात — २	कि० घ० मशरूवाला	३८१
मि० चर्चिलका जवाब		३८२
विनोबाकी अुत्तर भारतकी यात्रा – ९	दा० मूं०	३८२

www.vinoba.in